

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ



ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

ॐ
ॐ
ॐ
ॐ
ॐ
ॐ

[illegible]

११ ॐ श्री परमात्मने नमः ११

श्री गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित

सुंदरकांड का परिचय

सुंदरकांड, श्रीरामचरितमानस का एक महत्वपूर्ण खंड है, जिसे महान कवी गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित किया गया है। यह ग्रंथ न केवल भारतीय साहित्य में विशेष स्थान रखता है, बल्कि धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से भी इसे अत्यधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। सुंदरकांड का मुख्य उद्देश्य भक्तों को भगवान श्रीराम के गुणों और उनके प्रति भक्ति की प्रेरणा देना है।

सुंदरकांड, श्री रामायण के महाकाव्य का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जिसे गोस्वामी तुलसीदास ने बड़े कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है। यह खंड मुख्यतया हनुमानजी की अद्वितीयता और उनके साहस का वर्णन करता है। सुंदरकांड की कथा की आरंभिक पंक्तियों में हनुमान जी की स्थिति, उनकी शक्ति और राम के प्रति उनकी निष्ठा को प्रमुखता दी गई है। इस खंड में हनुमानजी सीता माता की खोज के उद्देश्य से लंका की यात्रा करते हैं, जो कि न केवल एक जीवित चित्रण है बल्कि उस समय के सामाजिक और धार्मिक जीवन का भी प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करता है।

रामायण के कालक्रम में सुंदरकांड की घटनाएँ उस समय के संघर्षों, संधियों और अन्य पात्रों के संवादों से भरी हुई हैं। हनुमानजी, जो न केवल भगवान शिव के अवतार माने जाते हैं, बल्कि एक अद्वितीय भक्त भी हैं, उनका वर्णन इस खंड में विशेष रूप से किया गया है। उनकी शक्ति, विद्या और भक्ति से दर्शाया गया है कि कैसे एक भक्त अपने इष्ट की भक्ति में अडिग रहकर असंभव कार्य भी कर सकता है। सुंदरकांड में हनुमानजी द्वारा लंका को जलाने की घटना अत्यंत प्रेरणादायक है, जो उनके अद्भुत साहस को दर्शाती है।

सुंदरकांड रामायण की उन गाथाओं में से एक है, जो हनुमानजी की महिमा को वैश्विक स्तर पर उजागर करती है। यह केवल एक काव्यात्मक अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि यह एक नैतिक पाठ भी है, जो हमें सिखाता है कि भक्ति, शक्ति और निस्वार्थ सेवा के माध्यम से किसी भी लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार, सुंदरकांड का आलंबन भक्ति भाव, साहस, और संकल्प के प्रतीक के रूप में है।

११ भगवान जानकी नाथ जी की आरती ११

ॐ जय जानकीनाथा, जय श्री रघुनाथा ।
दोउ कर जोरें बिनवौं, प्रभु! सुनिये बाता ॥ ॐ जय..॥
तुम रघुनाथ हमारे, प्राण पिता माता ।
तुम ही सज्जन-संगी, भक्ति मुक्ति दाता ॥ ॐ जय..॥

लख चौरासी काटो, मेटो यम त्रासा ।
निशदिन प्रभु मोहि रखिये,अपने ही पासा ॥ ॐ जय..॥

राम भरत लछिमन, सँग शत्रुहन भैया ।
जगमग ज्योति विराजै, शोभा अति लहिया ॥ ॐ जय..॥

हनुमत नाद बजावत, नेवर झमकाता ।
स्वर्णताल कर आरती, करत कौशल्या माता ॥ ॐ जय..॥

सुभग मुकुट सिर, धनु सर, कर शोभा भारी ।
मनीराम दर्शन करि, पल-पल बलिहारी ॥ ॐ जय..॥

जय जानकिनाथा, हो प्रभु जय श्री रघुनाथा ।
हो प्रभु जय सीता माता, हो प्रभु जय लक्ष्मण भ्राता ॥ ॐ जय..॥

हो प्रभु जय चारौं भ्राता, हो प्रभु जय हनुमत दासा ।
दोउ कर जोड़े विनवौं, प्रभु मेरी सुनो बाता ॥ ॐ जय..॥

११ सुंदरकांड ११

कथा प्रारम्भ होत है। सुनहुँ वीर हनुमान॥
आसान लीजो प्रेम से। करहुँ सदा कल्याण॥

| श्लोक ||

शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदं,
ब्रह्माशम्भुफणीन्द्रसेव्यमनिशं वेदान्तवेद्यं विभुम्,
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिं,
वन्देऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूडामणिम्॥१॥

नान्या स्पृहा रघुपते हृदयेऽस्मदीये
सत्यं वदामि च भवानखिलान्तरात्मा।
भक्तिं प्रयच्छ रघुपुङ्गव निर्भरां मे
कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च॥२॥

अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि॥३॥

जामवंत के बचन सुहाए। सुनि हनुमंत हृदय अति भाए॥
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई। सहि दुख कंद मूल फल खाई॥
जब लगि आवौं सीतहि देखी। होइहि काजु मोहि हरष बिसेषी॥
यह कहि नाइ सबन्हि कहूँ माथा। चलेउ हरषि हियँ धरि रघुनाथा॥

सिंधु तीर एक भूधर सुंदर। कौतुक कूदि चढ़ेउ ता ऊपर॥
बार बार रघुबीर सँभारी। तरकेउ पवनतनय बल भारी॥
जेहिं गिरि चरन देइ हनुमंता। चलेउ सो गा पाताल तुरंता॥
जिमि अमोघ रघुपति कर बाना। एही भाँति चलेउ हनुमाना॥
जलनिधि रघुपति दूत बिचारी। तैं मैनाक होहि श्रमहारी॥

दोहा - १

हनूमान तेहि परसा कर पुनि कीन्ह प्रनाम।
राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ बिश्राम॥१॥

जात पवनसुत देवन्ह देखा। जानैं कहूँ बल बुद्धि बिसेषा॥
सुरसा नाम अहिन्ह कै माता। पठइन्हि आइ कही तेहिं बाता॥
आजु सुरन्ह मोहि दीन्ह अहारा। सुनत बचन कह पवनकुमारा॥
राम काजु करि फिरि मैं आवौं। सीता कइ सुधि प्रभुहि सुनावौं॥
तब तव बदन पैठिहउँ आई। सत्य कहउँ मोहि जान दे माई॥
कबनेहुँ जतन देइ नहिं जाना। ग्रससि न मोहि कहेउ हनुमाना॥
जोजन भरि तेहिं बदनु पसारा। कपि तनु कीन्ह दुगुन बिस्तारा॥
सोरह जोजन मुख तेहिं ठयऊ। तुरत पवनसुत बत्तिस भयऊ॥
जस जस सुरसा बदनु बढावा। तासु दून कपि रूप देखावा॥
सत जोजन तेहिं आनन कीन्हा। अति लघु रूप पवनसुत लीन्हा॥
बदन पइठि पुनि बाहेर आवा। मागा बिदा ताहि सिरु नावा॥
मोहि सुरन्ह जेहि लागि पठावा। बुधि बल मरमु तोर मै पावा॥

तरु पल्लव महूँ रहा लुकाई। करइ बिचार करौं का भाई॥
तेहि अवसर रावनु तहूँ आवा। संग नारि बहु किएँ बनावा॥
बहु बिधि खल सीतहि समुझावा। साम दान भय भेद देखावा॥
कह रावनु सुनु सुमुखि सयानी। मंदोदरी आदि सब रानी॥
तव अनुचरीं करउँ पन मोरा। एक बार बिलोकु मम ओरा॥
तून धरि ओट कहति बैदेही। सुमिरि अवधपति परम सनेही॥
सुनु दसमुख खद्योत प्रकासा। कबहूँ कि नलिनी करइ बिकासा॥
अस मन समुझु कहति जानकी। खल सुधि नहिं रघुबीर बान की॥
सठ सूने हरि आनेहि मोहि। अधम निलज्ज लाज नहिं तोही॥

आपुहि सुनि खद्योत सम रामहि भानु समान।
परुष बचन सुनि काढ़ि असि बोला अति खिसिआन॥१॥

दोहा - १०

भवन गयउ दसकंधर इहाँ पिसाचिनि बृंद।
सीतहि त्रास देखावहि धरहिं रूप बहु मंद॥१०॥

त्रिजटा नाम राच्छसी एका। राम चरन रति निपुन बिबेका॥
सबन्हौ बोलि सुनाएसि सपना। सीतहि सेइ करहु हित अपना॥
सपनें बानर लंका जारी। जातुधान सेना सब मारी॥
खर आरूढ़ नगन दससीसा। मुंडित सिर खंडित भुज बीसा॥
एहि बिधि सो दच्छिन दिसि जाई। लंका मनहुँ बिभीषन पाई॥
नगर फिरी रघुबीर दोहाई। तब प्रभु सीता बोलि पठाई॥
यह सपना में कहउँ पुकारी। होइहि सत्य गएँ दिन चारी॥
तासु बचन सुनि ते सब डरीं। जनकसूता के चरनन्हि परीं॥

दोहा - ११

जहँ तहँ गई सकल तब सीता कर मन सोच।
मास दिवस बीतें मोहि मारिहि निसिचर पोच॥११॥

त्रिजटा सन बोली कर जोरी। मातु बिपति संगिनि तैं मोरी॥
तजौं देह करु बेगि उपाई। दुसहु बिरहु अब नहिं सहि जाई॥
आनि काठ रचु चिता बनाई। मातु अनल पुनि देहि लगाई॥
सत्य करहि मम प्रीति सयानी। सुनै को श्रवन सूल सम बानी॥
सुनत बचन पद गहि समुझाएसि। प्रभु प्रताप बल सुजसु सुनाएसि॥
निसि न अनल मिल सुनु सुकुमारी। अस कहि सो निज भवन सिधारी॥
कह सीता बिधि भा प्रतिकूला। मिलहि न पावक मिटिहि न सूला॥
देखिअत प्रगट गगन अंगारा। अवनि न आवत एकउ तारा॥
पावकमय ससि स्त्रवत न आगी। मानहुँ मोहि जानि हतभागी॥
सुनहि बिनय मम बिटप असोका। सत्य नाम करु हरु मम सोका॥
नूतन किसलय अनल समाना। देहि अगिनि जनि करहि निदाना॥
देखि परम बिरहाकुल सीता। सो छन कपिहि कलप सम बीता॥

दोहा - १७
देखि बुद्धि बल निपुन कपि कहेउ जानकीं जाहु।
रघुपति चरन हृदयँ धरि तात मधुर फल खाहु॥१७॥

चलेउ नाइ सिरु पैठेउ बागा। फल खाएसि तरु तोरैं लागा।।
रहे तहाँ बहु भट रखवारे। कछु मारेसि कछु जाइ पुकारे।।
नाथ एक आवा कपि भारी। तेहिं असोक बाटिका उजारी।।
खाएसि फल अरु बिटप उपारे। रच्छक मर्दि मर्दि महि डारे।।
सुनि रावन पठए भट नाना। तिन्हहि देखि गर्जेउ हनुमाना।।
सब रजनीचर कपि संघारे। गए पुकारत कछु अधमारे।।
पुनि पठयउ तेहिं अच्छकुमारा। चला संग लै सुभट अपारा।।
आवत देखि बिटप गहि तर्जा। ताहि निपाति महाधुनि गर्जा।।

दोहा - १८
कछु मारेसि कछु मर्देसि कछु मिलएसि धरि धूरि।
कछु पुनि जाइ पुकारे प्रभु मर्कट बल भूरि॥१८॥

सुनि सुत बध लंकेस रिसाना। पठएसि मेघनाद बलवाना॥
मारसि जनि सुत बांधेसु ताही। देखिअ कपिहि कहाँ कर आही॥
चला इंद्रजित अतुलित जोधा। बंधु निधन सुनि उपजा क्रोधा॥
कपि देखा दारुन भट आवा। कटकटाइ गर्जा अरु धावा॥
अति बिसाल तरु एक उपारा। बिरथ कीन्ह लंकेस कुमारा॥
रहे महाभट ताके संग। गहि गहि कपि मर्दइ निज अंगा॥
तिन्हहि निपाति ताहि सन बाजा। भिरे जुगल मानहुँ गजराजा॥
मुठिका मारि चढ़ा तरु जाई। ताहि एक छन मुरुछा आई॥
उठि बहोरि कीन्हिसि बह माया। जीति न जाइ प्रभंजन जाया॥

**ब्रह्म अस्त्र तेहिं साँधा कपि मन कीन्ह बिचार।
जौं न ब्रह्मसर मानउँ महिमा मिटइ अपार॥१९॥**

दोहा - २०
कपिहि बिलोकि दसानन बिहसा कहि दुर्बाद।
सुत बध सुरति कीन्हि पुनि उपजा हृदयँ बिषाद॥२०॥

कह लंकेस कवन तैं कीसा। केहिं के बल घालेहि बन खीसा॥
की धौं श्रवन सुनेहि नहिं मोही। देखउँ अति असंक सठ तोही॥
मारे निसिचर केहिं अपराधा। कहु सठ तोहि न प्रान कइ बाधा॥
सुन रावन ब्रह्मांड निकाया। पाइ जासु बल बिरचित माया॥
जाकें बल बिरंचि हरि ईसा। पालत सृजत हरत दससीसा।
जा बल सीस धरत सहसानन। अंडकोस समेत गिरि कानन॥
धरइ जो बिबिध देह सुरत्राता। तुम्ह ते सठन्ह सिखावनु दाता।
हर कोदंड कठिन जेहि भंजा। तेहि समेत नृप दल मद गंजा॥
खर दूषन त्रिसिरा अरु बाली। बधे सकल अतुलित बलसाली॥

दोहा - २१
जाके बल लवलेस तें जितेहु चराचर झारि।
तासु दूत मैं जा करि हरि आनेहु प्रिय नारि॥२१॥

जदपि कहि कपि अति हित बानी। भगति बिबेक बिरति नय सानी॥
बोला बिहसि महा अभिमानी। मिला हमहि कपि गुर बड़ ग्यानी॥
मृत्यु निकट आई खल तोही। लागेसि अधम सिखावन मोही॥
उलटा होइहि कह हनुमाना। मतिभ्रम तोर प्रगट मैं जाना॥
सुनि कपि बचन बहुत खिसिआना। बेगि न हरहुँ मूढ़ कर प्राना॥
सुनत निसाचर मारन धाए। सचिवन्ह सहित बिभीषनु आए।
नाइ सीस करि बिनय बहूता। नीति बिरोध न मारिअ दूता॥
आन दंड कछु करिअ गोसाँई। सबहीं कहा मंत्र भल भाई॥
सुनत बिहसि बोला दसकंधर। अंग भंग करि पठइअ बंदर॥

मातु मोहि दीजे कछु चीन्हा। जैसैं रघुनायक मोहि दीन्हा॥
चूड़ामनि उतारि तब दयऊ। हरष समेत पवनसुत लयऊ॥
कहेहु तात अस मोर प्रनामा। सब प्रकार प्रभु पूरनकामा॥
दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी॥
तात सक्रसुत कथा सुनाएहु। बान प्रताप प्रभुहि समुझाएहु॥
मास दिवस महूँ नाथु न आवा। तौ पुनि मोहि जिअत नहिं पावा॥
कहु कपि केहि बिधि राखौं प्राना। तुम्हहू तात कहत अब जाना॥
तोहि देखि सीतलि भइ छाती। पुनि मो कहूँ सोइ दिनु सो राती॥

चलत महाधुनि गर्जेसि भारी। गर्भ स्त्रवहिं सुनि निसिचर नारी॥
नाघि सिंधु एहि पारहि आवा। सबद किलकिला कपिन्ह सुनावा॥
हरषे सब बिलोकि हनुमाना। नूतन जन्म कपिन्ह तब जाना॥
मुख प्रसन्न तन तेज बिराजा। कीन्हेसि रामचन्द्र कर काजा॥
मिले सकल अति भए सुखारी। तलफत मीन पाव जिमि बारी॥
चले हरषि रघुनायक पासा। पूँछत कहत नवल इतिहासा॥
तब मधुबन भीतर सब आए। अंगद संमत मधु फल खाए॥
रखवारे जब बरजन लागे। मुष्टि प्रहार हनत सब भागे॥

जौं न होति सीता सुधि पाई। मधुबन के फल सकहिं कि खाई॥
एहि बिधि मन बिचार कर राजा। आइ गए कपि सहित समाजा॥
आइ सबन्हि नावा पद सीसा। मिलेउ सबन्हि अति प्रेम कपीसा॥
पूँछी कुसल कुसल पद देखी। राम कृपाँ भा काजु बिसेषी॥
नाथ काजु कीन्हैउ हनुमाना। राखे सकल कपिन्ह के प्राना॥
सुनि सुग्रीव बहुरि तेहि मिलेऊ। कपिन्ह सहित रघुपति पहिं चलेऊ।
राम कपिन्ह जब आवत देखा। किएँ काजु मन हरष बिसेषा॥
फटिक सिला बैठे द्वौ भाई। परे सकल कपि चरनन्हि जाई॥

सुनि सीता दुख प्रभु सुख अयना। भरि आए जल राजिव नयना॥
बचन काँय मन मम गति जाही। सपनेहुँ बूझिअ बिपति कि ताही॥
कह हनुमंत बिपति प्रभु सोई। जब तव सुमिरन भजन न होई॥
केतिक बात प्रभु जातुधान की। रिपुहि जीति आनिबी जानकी॥
सुनु कपि तोहि समान उपकारी। नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी॥
प्रति उपकार करौं का तोरा। सनमुख होइ न सकत मन मोरा॥
सुनु सुत उरिन मैं नाहीं। देखेउँ करि बिचार मन माहीं॥
पुनि पुनि कपिहि चितव सुरत्राता। लोचन नीर पुलक अति गाता॥

बार बार प्रभु चहइ उठावा। प्रेम मगन तेहि उठब न भावा॥
प्रभु कर पंकज कपि कैं सीसा। सुमिरि सो दसा मगन गौरीसा॥
सावधान मन करि पुनि संकर। लागे कहन कथा अति सुंदर॥
कपि उठाइ प्रभु हृदयँ लगावा। कर गहि परम निकट बैठावा॥
कहु कपि रावन पालित लंका। केहि बिधि दहेउ दुर्ग अति बंका॥
प्रभु प्रसन्न जाना हनुमाना। बोला बचन बिगत अभिमाना॥
साखामृग के बड़ि मनुसाई। साखा तें साखा पर जाई॥
नाघि सिंधु हाटकपुर जारा। निसिचर गन बिधि बिपिन उजारा॥
सो सब तव प्रताप रघुराई। नाथ न कछु मोरि प्रभुताई॥

नाथ भगति अति सुखदायनी। देहु कृपा करि अनपायनी॥
सुनि प्रभु परम सरल कपि बानी। एवमस्तु तब कहेउ भवानी॥
उमा राम सुभाउ जेहिं जाना। ताहि भजनु तजि भाव न आना॥
यह संवाद जासु उर आवा। रघुपति चरन भगति सोइ पावा॥
सुनि प्रभु बचन कहहिं कपिबुंदा। जय जय जय कृपाल सुखकंदा॥
तब रघुपति कपिपतिहि बोलावा। कहा चलैं कर करहु बनावा॥
अब बिलंबु केहि कारन कीजे। तुरत कपिन्ह कहूँ आयसु दीजे॥
कौतुक देखि सुमन बह बरषी। नभ तें भवन चले सुर हरषी॥

[illegible][illegible]

दोहा - ३४

कपिपति बेगि बोलाए आए जूथप जूथ।

नाना बरन अतुल बल बानर भालु बरूथ॥३४॥

प्रभु पद पंकज नावहिं सीसा। गरजहिं भालु महाबल कीसा।।
देखी राम सकल कपि सेना। चितइ कृपा करि राजिव नैना।।
राम कृपा बल पाइ कपिंदा। भए पच्छजुत मनहुँ गिरिंदा।।
हरषि राम तब कीन्ह पयाना। सगुन भए सुंदर सुभ नाना।।
जासु सकल मंगलमय कीती। तासु पयान सगुन यह नीती।।
प्रभु पयान जाना बैदेहीं। फरकि बाम अँग जनु कहि देहीं।।
जोइ जोइ सगुन जानकिहि होई। असगुन भयउ रावनहि सोई।।
चला कटकु को बरनैं पारा। गर्जहि बानर भालु अपारा।।
नख आयुध गिरि पादपधारी। चले गगन महि इच्छाचारी।।
केहरिनाद भालु कपि करहीं। डगमगाहिं दिग्गज चिक्करहीं।।

छन्द

चिक्करहिं दिग्गज डोल महि गिरि लोल सागर खरभरे।

मन हरष सभ गंधर्ब सुर मुनि नाग किन्नर दुख टरे।।

कटकटहिं मर्कट बिकट भट बहु कोटि कोटिन्ह धावहीं।
जय राम प्रबल प्रताप कोसलनाथ गुन गन गावहीं॥१॥
सहि सक न भार उदार अहिपति बार बारहिं मोहई।
गह दसन पुनि पुनि कमठ पृष्ठ कठोर सो किमि सोहई॥
रघुबीर रुचिर प्रयान प्रस्थिति जानि परम सुहावनी।
जन्म कमठ खर्पर सर्पराज सो लिखत अबिचल पावनी॥२॥

दोहा - ३५

एहि बिधि जाइ कृपानिधि उत्तरे सागर तीर।

जहँ तहँ लागे खान फल भालु बिपुल कपि बीर॥३५॥

उहाँ निसाचर रहहिं ससंका। जब ते जारि गयउ कपि लंका॥
निज निज गृहँ सब करहिं बिचारा। नहिं निसिचर कुल केर उबारा॥
जासु दूत बल बरनि न जाई। तेहि आएँ पुर कवन भलाई॥
दूतन्हि सन सुनि पुरजन बानी। मंदोदरी अधिक अकुलानी॥
रहसि जोरि कर पति पग लागी। बोली बचन नीति रस पागी॥
कंत करष हरि सन परिहरहू। मोर कहा अति हित हियँ धरहु॥
समुझत जासु दूत कइ करनी। स्त्रवहीं गर्भ रजनीचर धरनी॥
तासु नारि निज सचिव बोलाई। पठवहु कंत जो चहहु भलाई॥
तब कुल कमल बिपिन दुखदाई। सीता सीत निसा सम आई॥
सुनह नाथ सीता बिनु दीन्हें। हित न तुम्हार संभु अज कीन्हें॥

ॐ ॐ

बार बार पद लागउँ बिनय करउँ दससीस।
परिहरि मान मोह मद भजहु कोसलाधीस॥३९(क)॥
मुनि पुलस्ति निज सिष्य सन कहि पठई यह बात।
तुरत सो मैं प्रभु सन कही पाइ सुअवसरु तात॥३९(ख)॥

दोहा - ४०
तात चरन गहि मागउँ राखहु मोर दुलार।
सीत देहु राम कहूँ अहित न होइ तुम्हार॥४०॥

दोहा - ४१
 रामु सत्यसंकल्प प्रभु सभा कालबस तोरि।
 मै रघुबीर सरन अब जाउँ देहु जनि खोरि॥४१॥

अस कहि चला बिभीषनु जबहीं। आयूहीन भए सब तबहीं॥
साधु अवग्या तुरत भवानी। कर कल्यान अखिल कै हानी॥
रावन जबहिं बिभीषन त्यागा। भयउ बिभव बिनु तबहिं अभागा॥
चलेउ हरषि रघुनायक पाहीं। करत मनोरथ बहु मन माहीं॥
देखिहउँ जाइ चरन जलजाता। अरुन मृदुल सेवक सुखदाता॥
जे पद परसि तरी रिषिनारी। दंडक कानन पावनकारी॥
जे पद जनकसुताँ उर लाए। कपट कुरंग संग धर धाए॥
हर उर सर सरोज पद जेई। अहोभाग्य मै देखिहउँ तेई॥

उभय भाँति तेहि आनहु हँसि कह कृपानिकेत।
जय कृपाल कहि चले अंगद हनू समेत॥४४॥

श्रवन सुजसु सुनि आयउँ प्रभु भंजन भव भीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुबीर॥४५॥

तब लागि कुसल न जीव कहूँ सपनेहुँ मन बिश्राम।
जब लागि भजत न राम कहूँ सोक धाम तजि काम॥४६॥

तब लागि हृदयँ बसत खल नाना। लोभ मोह मच्छर मद माना॥
जब लागि उर न बसत रघुनाथा। धरें चाप सायक कटि भाथा॥
ममता तरुन तमी अँधिआरी। राग द्वेष उलूक सुखकारी॥
तब लागि बसति जीव मन माहीं। जब लागि प्रभु प्रताप रबि नाहीं॥
अब मैं कुसल मिटे भय भारे। देखि राम पद कमल तुम्हारे॥
तुम्ह कृपाल जा पर अनुकूला। ताहि न ब्याप त्रिबिध भव सूला॥
मैं निसिचर अति अधम सुभाऊ। सुभ आचरनु कीन्ह नहिं काऊ॥
जासु रूप मुनि ध्यान न आवा। तेहिं प्रभु हरषि हृदयँ मोहि लावा॥

दोहा - ५०

सखा कही तुम्ह नीकि उपाई। करिअ दैव जौं होइ सहाई॥
मंत्र न यह लछिमन मन भावा। राम बचन सुनि अति दुख पावा॥
नाथ दैव कर कवन भरोसा। सोषिअ सिंधु करिअ मन रोसा॥
कादर मन कहूँ एक अधारा। दैव दैव आलसी पुकारा॥
सुनत बिहसि बोले रघुबीरा। ऐसेहिं करब धरहु मन धीरा॥
अस कहि प्रभु अनुजहि समुझाई। सिंधु समीप गए रघुराई॥
प्रथम प्रनाम कीन्ह सिरु नाई। बैठे पुनि तट दर्भ डसाई॥
जबहिं बिभीषन प्रभु पहिं आए। पाछें रावन दूत पठाए॥

दोहा - ५१

प्रगट बखानहिं राम सुभाऊ। अति सप्रेम गा बिसरि दुराऊ॥
रिपु के दूत कपिन्ह तब जाने। सकल बाँधि कपीस पहिं आने॥
कह सुग्रीव सुनहु सब बानर। अंग भंग करि पठवहु निसिचर॥
सुनि सुग्रीव बचन कपि धाए। बाँधि कटक चहु पास फिराए॥
बहु प्रकार मारन कपि लागे। दीन पुकारत तदपि न त्यागे॥
जो हमार हर नासा काना। तेहि कोसलाधीस कै आना॥
सुनि लछिमन सब निकट बोलाए। दया लागि हँसि तुरत छोडाए॥
रावन कर दीजहु यह पाती। लछिमन बचन बाचु कुलघाती॥

दोहा - ५२

कहेहु मुखार मूढ़ सन मम संदेसु उदार।
सीता देइ मिलेहु न त आवा काल तुम्हार॥५२॥

[illegible][illegible]

तुरत नाइ लछिमन पद माथा। चले दूत बरनत गुन गाथा॥
कहत राम जसु लंकाँ आए। रावन चरन सीस तिन्ह नाए॥
बिहसि दसानन पूँछी बाता। कहसि न सुक आपनि कुसलाता॥
पुनि कहु खबरि बिभीषन केरी। जाहि मृत्यु आई अति नेरी॥
करत राज लंका सठ त्यागी। होइहि जब कर कीट अभागी॥
पुनि कहु भालु कीस कटकाई। कठिन काल प्रेरित चलि आई॥
जिन्ह के जीवन कर रखवारा। भयउ मृदुल चित सिंधु बिचारा॥
कहु तपसिन्ह कै बात बहोरी। जिन्ह के हृदयँ त्रास अति मोरी॥

दोहा - ५३

की भइ भेंट कि फिरि गए श्रवन सुजसु सुनि मोर।
कहसि न रिपु दल तेज बल बहुत चकित चित तोर॥५३॥

नाथ कृपा करि पूँछेहु जैसें। मानहु कहा क्रोध तजि तैसें॥
मिला जाइ जब अनुज तुम्हारा। जातहिं राम तिलक तेहि सारा॥
रावन दूत हमहि सुनि काना। कपिन्ह बाँधि दीन्हे दुख नाना॥
श्रवन नासिका काटै लागे। राम सपथ दीन्हे हम त्यागे॥
पूँछिहु नाथ राम कटकाई। बदन कोटि सत बरनि न जाई॥
नाना बरन भालु कपि धारी। बिकटानन बिसाल भयकारी॥
जेहिं पुर दहेउ हतेउ सुत तोरा। सकल कपिन्ह महँ तेहि बलु थोरा॥
अमित नाम भट कठिन कराला। अमित नाग बल बिपुल बिसाला॥

दोहा - ५४

द्विबिद मयंद नील नल अंगद गद बिकटासि।
दधिमुख केहरि निसठ सठ जामवंत बलरासि॥५४॥

ए कपि सब सुग्रीव समाना। इन्ह सम कोटिन्ह गनइ को नाना॥
राम कृपाँ अतुलित बल तिन्हहीं। तून समान त्रेलोकहि गनहीं॥
अस मैं सुना श्रवन दसकंधर। पदुम अठारह जूथप बंदर॥
नाथ कटक महँ सो कपि नाहीं। जो न तुम्हहि जीतै रन माहीं॥
परम क्रोध मीजहिं सब हाथा। आयसु पै न देहिं रघुनाथा॥
सोषहिं सिंधु सहित झष ब्याला। पूरहीं न त भरि कुधर बिसाला॥
मर्दि गर्द मिलवहिं दससीसा। ऐसेइ बचन कहहिं सब कीसा॥
गर्जहिं तर्जहिं सहज असंका। मानह ग्रसन चहत हहिं लंका॥

ॐ ॐ

सहज सूर कपि भालु सब पुनि सिर पर प्रभु राम।
रावन काल कोटि कहु जीति सकहिं संग्राम॥५५॥

राम तेज बल बुधि बिपुलाई। सेष सहस सत सकहिं न गाई॥
सक सर एक सोषि सत सागर। तव भ्रातहि पूँछेउ नय नागर॥
तासु बचन सुनि सागर पाहीं। मागत पंथ कृपा मन माहीं॥
सुनत बचन बिहसा दससीसा। जौं असि मति सहाय कृत कीसा॥
सहज भीरु कर बचन दृढ़ाई। सागर सन ठानी मचलाई॥
मूढ़ मृषा का करसि बड़ाई। रिपु बल बुद्धि थाह मैं पाई॥
सचिव सभीत बिभीषन जाकें। बिजय बिभूति कहाँ जग ताकें॥
सुनि खल बचन दूत रिस बाढ़ी। समय बिचारि पत्रिका काढ़ी॥
रामानुज दीन्ही यह पाती। नाथ बचाइ जुड़ावहु छाती॥
बिहसि बाम कर लीन्ही रावन। सचिव बोलि सठ लाग बचावन॥

बातन्ह मनहि रिझाइ सठ जनि घालसि कुल खीस।
 राम बिरोध न उबरसि सरन बिष्णु अज ईस॥56(क)॥
 की तजि मान अनुज इव प्रभु पद पंकज भृंग।
 होहि कि राम सरानल खल कुल सहित पतंग॥56(ख)॥

सुनत सभय मन मुख मुसुकाई। कहत दसानन सबहि सुनाई॥
भूमि परा कर गहत अकासा। लघु तापस कर बाग बिलासा॥
कह सुक नाथ सत्य सब बानी। समुझहु छाड़ि प्रकृति अभिमानी॥
सुनहु बचन मम परिहरि क्रोधा। नाथ राम सन तजहु बिरोधा॥
अति कोमल रघुबीर सुभाऊ। जद्यपि अखिल लोक कर राऊ॥
मिलत कृपा तुम्ह पर प्रभु करिही। उर अपराध न एकउ धरिही॥
जनकसुता रघुनाथहि दीजे। एतना कहा मोर प्रभु कीजे।
जब तेहिं कहा देन बैदेही। चरन प्रहार कीन्ह सठ तेही॥
नाइ चरन सिरु चला सो तहाँ। कृपासिंधु रघुनायक जहाँ॥
करि प्रनामु निज कथा सुनाई। राम कृपाँ आपनि गति पाई॥
रिषि अगस्ति कीं साप भवानी। राछस भयउ रहा मुनि ग्यानी॥
बंदि राम पद बारहिं बारा। मुनि निज आश्रम कहँ पगु धारा॥

बिनय न मानत जलधि जड़ गए तीन दिन बीति।
बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति॥५७॥

काटेहिं पइ कदरी फरइ कोटि जतन कोउ सींच।
बिनय न मान खगेस सुनु डाटेहिं पइ नव नीच॥५८॥

सुनत बिनीत बचन अति कह कृपाल मुसुकाइ।
जेहि बिधि उतरै कपि कटकु तात सो कहहु उपाइ॥५९॥

सुनत सभय मन मुख मुसुकाई। कहत दसानन सबहि सुनाई॥
 भूमि परा कर गहत अकासा। लघु तापस कर बाग बिलासा॥
 कह सुक नाथ सत्य सब बानी। समुझहु छाड़ि प्रकृति अभिमानी॥
 सुनहु बचन मम परिहरि क्रोधा। नाथ राम सन तजहु बिरोधा॥
 अति कोमल रघुबीर सुभाऊ। जद्यपि अखिल लोक कर राऊ॥
 मिलत कृपा तुम्ह पर प्रभु करिही। उर अपराध न एकउ धरिही॥
 जनकसुता रघुनाथहि दीजे। एतना कहा मोर प्रभु कीजे।
 जब तेहिं कहा देन बैदेही। चरन प्रहार कीन्ह सठ तेही॥
 नाइ चरन सिरु चला सो तहाँ। कृपासिंधु रघुनायक जहाँ॥
 करि प्रनामु निज कथा सुनाई। राम कृपाँ आपनि गति पाई॥
 रिषि अगस्ति कीं साप भवानी। राछस भयउ रहा मुनि ग्यानी॥
 बंदि राम पद बारहिं बारा। मुनि निज आश्रम कहूँ पगु धारा॥

छन्द

**निज भवन गवनेउ सिंधु श्रीरघुपतिहि यह मत भायऊ।
 यह चरित कलि मलहर जथामति दास तुलसी गायऊ॥**

सुख भवन संसय समन दवन बिषाद रघुपति गुन गना॥
 तजि सकल आस भरोस गावहि सुनहि संतत सठ मना॥

दोहा - ६०

**सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान।
 सादर सुनहिं ते तरहिं भव सिंधु बिना जलजान॥६०॥**

इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने
 पञ्चमः सोपानः समाप्तः।
 सम्पूर्ण सुन्दरकाण्ड पाठ,
 (इति सुन्दरकाण्ड समाप्त)

११ कथा समापन दोहा ११

कथा विसर्जन होत है, सुनहु वीर हनुमान।
 जो जन जहाँ से आत है, जह तह करो प्रयाण॥
 राम लखन सिया जानकी, सदा करहूँ कल्याण।
 रामायण वैकुण्ठ की, विदा होत हनुमान॥
 सियावर रामचंद्र की जय। पवनसुत हनुमान की जय।